सपनों के से दिन

गुरदयाल सिंह

पाठ प्रवेश..

बचपन में भले ही सभी सोचते हों कि काश! हम बड़े होते तो कितना अच्छा होता। परन्तु जब सच में बड़े हो जाते हैं, तो उसी बचपन की यादों को याद कर-करके खुश हो जाते हैं। बचपन में बहुत सी ऐसी बातें होती हैं जो उस समय समझ में नहीं आती क्योंकि उस समय सोच का दायरा सिमित होता है। और ऐसा भी कई बार होता है कि जो बातें बचपन में बुरी लगती है वही बाते समझ आ जाने के बाद सही साबित होती हैं।प्रस्तुत पाठ में भी लेखक अपने बचपन की यादों का जिक्र कर रहा है कि किस तरह से वह और उसके साथी स्कूल के दिनों में मस्ती करते थे और वे अपने अध्यैापकों से कितना डरते थे। बचपन में लेखक अपने अध्यापक के

व्यवहार को नहीं समझ पाया था

उसी का वर्णन लेखक ने

इस पाठ में किया है।

क्या आपने किसी बच्चे को स्कूल के नाम से डरकर भागते हुए देखा है ?

चरित्र चित्रण : (मास्टर प्रीतम चंद)

(*i*) **सख्त अध्यापक**– पी०टी० मास्टर सख्त अध्यापक थे। वे चौथी श्रेणी के छोटे बच्चों द्वारा फ़ारसी के शब्द रूप याद न किए जाने पर मुर्गा बना देते थे। प्रार्थना कराते समय यदि कोई लड़का अपना सिर भी इधर-उधर हिला लेता था या पाँव से दूसरी पिंडली खुजलाने लगता, तो वह उसकी ओर बाघ की तरह झपट पड़ते और 'खाल खींचने' के मुहावरे को प्रत्यक्ष कर दिखाते थे।

(*ii*) **अनुशासन प्रिय**– मास्टर प्रीतम चंद अनुशासन प्रिय थे। प्रार्थना करते समय सीधी कतारों में कद के अनुसार खड़े लड़कों को देखकर उनका चेहरा खिल उठता था। छात्रों को स्काउटिंग का अभ्यास करवाते समय उनसे कोई गलती न होने पर वे शाबाशी देते थे।

(*iii*) **कुशल प्रशिक्षक**– मास्टर प्रीतम चंद जी एक कुशल प्रशिक्षक थे। वे छात्रों को स्काउट और गाइड की ट्रेनिंग दिया करते थे। नीली-पीली झंडियों के साथ जब वे स्काउटिंग की परेड करवाते तो छात्रों में एक जोश भर देते थे। ऐसे समय में छात्र स्वयं को एक आम आदमी नहीं, अपितु महत्त्वपूर्ण फ़ौजी जवान समझने लगते थे।

(*iv*) **पक्षियों के प्रति प्रेम रखने वाले**– मास्टर प्रीतम चंद ने दो तोते पाल रखे थे। वे नौकरी से निलंबित होने के पश्चात भी दिन में कई बार भिगोकर रखे बादाम उन्हें खिलाते थे। वे तोतों से मीठी-मीठी बातें करते थे। यह उनके स्वभाव के विरोधाभास को दर्शाता है।

लेखक का सहपाठी (ओमा)

ओमा लेखक के बचपन का मित्र था। वे दोनों एक ही कक्षा में पढ़ते थे। ओमा बहुत शरारती छात्र था। वह दूसरे विद्यार्थियों को मारता-पीटता था और वह गंदी-गंदी गालियाँ भी दिया करता था। वह अत्यंत अनुशासनहीन छात्र था। वह बहुत ताकतवर भी था। वह चंचल स्वभाव का बालक था, जिसे पढ़ना-लिखना अच्छा नहीं लगता था। कक्षा में शिक्षक द्वारा दिए गए काम को ओमा कभी पूरा नहीं कर पाता था। शिक्षक के द्वारा पिटाई खाने को वह आसान समझता था। उनकी पिटाई का उस पर कोई असर नहीं पड़ता था क्योंकि उसका शरीर बहुत मज़बूत था, उसका 'सिर' भी बहुत बड़ा था। वह लड़ाई में 'सिर' से ही वार करता था इसलिए बच्चे 'ओमा' को 'रैल-बंबा' कहकर पुकारते थे।

हेडमास्टर (शर्मा जी)

हेडमास्टर शर्मा जी अनुशासन प्रिय परंतु विनम्र व्यक्ति थे। वे बच्चों को मारने-पीटने में विश्वास नहीं रखते थे। वे बहुत प्रेम से छात्रों को पढ़ाते थे और नाराज़गी भी आँखों से ही प्रकट करते थे। बहुत गुस्सा होने पर गाल पर हल्की-सी चपत लगाकर बच्चों को सुधार देते थे। वे क्रूरता से कोसों दूर थे और इसी कारण मास्टर प्रीतमचंद की बर्बरता वे सहन नहीं कर सके और उन्होंने तुरंत-प्रभाव से विद्यालय से निकलवा दिया। वे एक अच्छे प्रशासक, गुरु तथा उदारमना थे।

लेखक कहते है कि उसके बचपन में उसके साथ खेलने वाले बच्चों का हाल भी उसी की तरह होता था। सभी के पाँव नंगे, फटी-मैली सी कच्छी और कई जगह से फटे कुर्ते , जिनके बटन टूटे हुए होते थे और सभी के बाल बिखरे हुए होते थे।

जब सभी खेल कर, धूल से लिपटे हुए, कई जगह से पाँव में छाले लिए, घुटने और टखने के बीच का टाँग के पीछे माँस वाले भाग पर खून के ऊपर जमी हुई रेत-मिट्टी से लथपथ पिंडलियाँ ले कर अपने-अपने घर जाते तो सभी की माँ-बहनें उन पर तरस नहीं खाती बल्कि उल्टा और ज्यादा पीट देतीं। कई बच्चों के पिता तो इतने गुस्से वाले होते कि जब बच्चे को पीटना शुरू करते तो यह भी ध्यान नहीं रखते कि छोटे बच्चे के नाक-मुँह से लहू बहने लगा है और ये भी नहीं पूछते कि उसे चोट कहाँ लगी है। परन्तु इतनी बुरी पिटाई होने पर भी दूसरे दिन सभी बच्चे फिर से खेलने के लिए चले आते। लेखक कहते है कि यह बात लेखक को तब समझ आई जब लेखक स्कूल अध्यापक बनने के लिए प्रशिक्षण ले रहा था। वहाँ लेखक ने बच्चों के मन के विज्ञान का विषय पढ़ा था।

लेखक कहते है कि कुछ परिवार के बच्चे तो स्कूल ही नहीं जाते थे और जो कभी गए भी, पढाई में रूचि न होने के कारण किसी दिन बस्ता तालाब में फेंक आए और उनके माँ-बाप ने भी उनको स्कूल भेजने के लिए कोई जबरदस्ती नहीं की। यहाँ तक की राशन की दुकान वाला और जो किसानों की फसलों को खरीदते और बेचते हैं वे भी अपने बच्चों को स्कूल भेजना ज़रुरी नहीं समझते थे। वे कहते थे कि जब उनका बच्चा थोड़ा बड़ा हो जायगा तो पंडत घनश्याम दास से हिसाब-किताब लिखने की पंजाबी प्राचीन लिपि पढ़वाकर सीखा देंगे और दुकान पर खाता लिखवाने लगा देंगे।

लेखक कहते है कि बचपन में किसी को भी स्कूल के उस कमरे में बैठ कर पढ़ाई करना किसी कैद से कम नहीं लगता था। बचपन में घास ज्यादा हरी और फूलों की सुगंध बहुत ज्यादा मन को लुभाने वाली लगती है। लेखक कहते है की उस समय स्कूल की छोटी क्यारियों में फूल भी कई तरह के उगाए जाते थे जिनमें गुलाब, गेंदा और मोतिया की दूध-सी सफ़ेद कलियाँ भी हुआ करतीं थीं। ये कलियाँ इतनी सुंदर और खुशबूदार होती थीं कि लेखक और उनके साथी चपरासी से छुप-छुपा कर कभी-कभी कुछ फूल तोड़ लिया करते थे। परन्तु लेखक को अब यह याद नहीं कि फिर उन फूलों का वे क्या करते थे। लेखक कहते है कि शायद वे उन फूलों को या तो जेब में डाल लेते होंगे और माँ उसे धोने के समय निकालकर बाहर फेंक देती होगी या लेखक और उनके साथी खुद ही, स्कूल से बाहर आते समय उन्हें बकरी के मेमनों की तरह खा या 'चर' जाया करते होगें।

कुछ खेलों की झलक

लेखक कहते है कि उसके समय में स्कूलों में, साल के शुरू में एक-डेढ़ महीना ही पढ़ाई हुआ करती थी, फिर डेढ़-दो महीने की छुट्टियाँ शुरू हो जाती थी। हर साल ही छुट्टियों में लेखक अपनी माँ के साथ अपनी नानी के घर चले जाता था। वहाँ नानी खूब दूध-दहीं, मक्खन खिलाती, बहुत ज्यादा प्यार करती थी। दोपहर तक तो लेखक और उनके साथी उस तालाब में नहाते फिर नानी से जो उनका जी करता वह माँगकर खाने लगते। लेखक कहते है कि जिस साल वह नानी के घर नहीं जा पाता था, उस साल लेखक अपने घर से दूर जो तालाब था वहाँ जाया करता था। लेखक और उसके साथी कपड़े उतार कर पानी में कूद जाते, फिर पानी से निकलकर भागते हुए एक रेतीले टीले पर जाकर रेत के ऊपर लोटने लगते फिर गीले शरीर को गर्म रेत से खूब लथपथ करके फिर उसी किसी ऊँची जगह जाकर वहाँ से तालाब में छलाँग लगा देते थे। लेखक कहते है कि उसे यह याद नहीं है कि वे इस तरह दौड़ना, रेत में लोटना और फिर दौड़ कर तालाब में कूद जाने का सिलसिला पाँच-दस बार करते थे या पंद्रह-बीस बार।

लेखक कहते है कि जैसे-जैसे उनकी छुट्टियों के दिन ख़त्म होने लगते तो वे लोग दिन गिनने शुरू कर देते थे। डर के कारण लेखक और उसके साथी खेल-कूद के साथ-साथ तालाब में नहाना भी भूल जाते। अध्यापकों ने जो काम छुट्टियों में करने के लिए दिया होता था, उसको कैसे करना है इस बारे में सोचने लगते। काम न किया होने के कारण स्कूल में होने वाली पिटाई का डर अब और ज्यादा बढ़ने लगता। लेखक बताता है कि उसके कितने ही सहपाठी ऐसे भी होते थे जो छुट्टियों का काम करने के बजाय अध्यापकों की पिटाई अधिक 'सस्ता सौदा' समझते। ऐसे समय में लेखक और उसके साथी का सबसे बड़ा 'नेता' ओमा हुआ करता था।

ओमा की बातें, गालियाँ और उसकी मार-पिटाई का ढंग सभी से बहुत अलग था। वह देखने में भी सभी से बहुत अलग था। उसका मटके के जितना बड़ा सिर था, जो उसके चार बालिश्त (ढ़ाई फुट) के छोटे कद के शरीर पर ऐसा लगता था जैसे बिल्ली के बच्चे के माथे पर तरबूज़ रखा हो।बड़े सिर पर नारियल जैसी आँखों वाला उसका चेहरा बंदरिया के बच्चे जैसा और भी अजीब लगता था। जब भी लड़ाई होती थी तो वह अपने हाथ-पाँव का प्रयोग नहीं करता था, वह अपने सिर से ही लड़ाई किया करता था। लड़ाई वह हाथ-पाँव नहीं, सिर से किया करता। उसके सिर की टक्कर का नाम हमने रेल-बम्बा रखा हुआ था- रेल के इंजन की भाँति बड़ा और भयंकर ही तो था

लेखक कहते है कि वह जिस स्कूल में पढता था वह स्कूल बहुत छोटा था। उसमें केवल छोटे-छोटे नौ कमरे थे, जो अंग्रेजी के अक्षर एच (H) की तरह बने हुए थे। दाईं ओर का पहला कमरा हेडमास्टर श्री मदनमोहन शर्मा जी का था। स्कूल की प्रेयर (प्रार्थना) के समय वह बाहर आते थे और सीधी पंक्तियों में कद के अनुसार खड़े लड़कों को देखकर उनके गोरा चेहरे पर ख़ुशी साफ़ ही दिखाई देती थी।मास्टर प्रीतम चंद जो स्कूल के 'पीटी' थे, वे लड़कों की पंक्तियों के पीछे खड़े-खड़े यह देखते रहते थे कि कौन सा लड़का पंक्ति में ठीक से नहीं खड़ा है। उनकी धमकी भरी डाँट तथा लात-घुस्से के डर से लेखक और लेखक के साथी पंक्ति के पहले और आखरी लड़के का ध्यान रखते, सीधी पंक्ति में बने रहने की पूरी कोशिश करते थे। मास्टर प्रीतम चंद बहुत ही सख्त अध्यापक थे। परन्तु हेडमास्टर शर्मा जी उनके बिलकुल उलट स्वभाव के थे। वह पाँचवीं और आठवीं कक्षा को अंग्रेजी स्वयं पढ़ाया करते थे। किसी को भी याद नहीं था कि पाँचवी कक्षा में कभी भी उन्होंने हेडमास्टर शर्मा जी को किसी गलती के कारण किसी को मारते या डाँटते देखा या सूना हो।

स्काउटिंग करते हुए कोई भी विद्यार्थी कोई गलती न करता तो पीटी साहब अपनी चमकीली आँखें हलके से झपकाते और सभी को शाबाश कहते। उनकी एक शाबाश लेखक और उसके साथियों को ऐसे लगने लगती जैसे उन्होंने किसी फ़ौज के सभी पदक या मैडल जीत लिए हों।

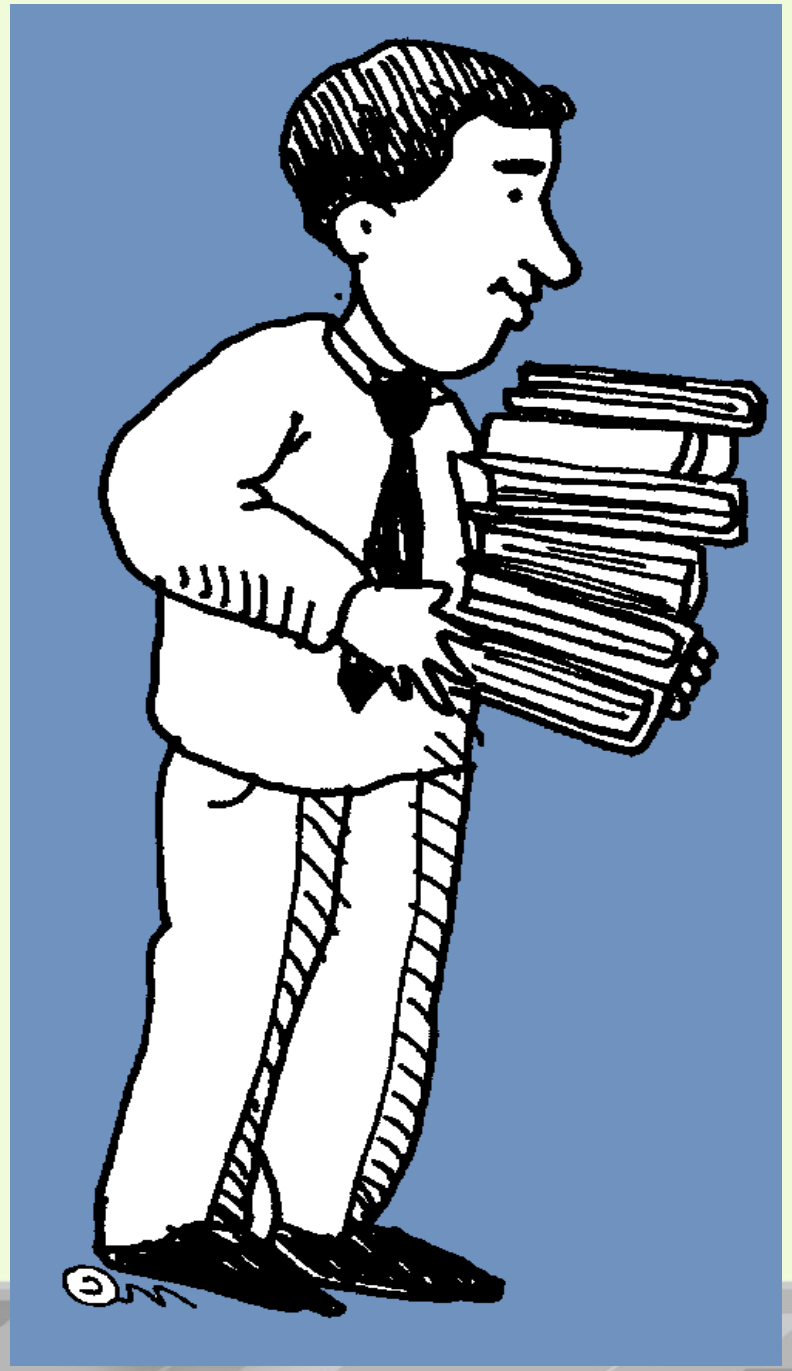

लेखक कहते है कि हर साल जब वह अगली कक्षा में प्रवेश करता तो उसे पुरानी पुस्तकें मिला करतीं थी। उसके स्कूल के हेडमास्टर शर्मा जी एक धनि घर के लड़के को उसके घर जा कर पढ़ाया करते थे। हर साल अप्रैल में जब पढ़ाई का नया साल आरम्भ होता था तो शर्मा जी उस लड़के की एक साल पुरानी पुस्तकें लेखक के लिए ले आते थे। लेखक के घर में किसी को भी पढ़ाई में कोई रूचि नहीं थी। यदि नयी किताबें लानी पड़तीं तो शायद इसी बहाने लेखक की पढ़ाई तीसरी-चौथी कक्षा में ही छूट जाती।

लेखक कहते है कि बचपन में स्कूल जाना बिलकुल भी अच्छा नहीं लगता था परन्तु एक-दो कारणों के कारण कभी-कभी स्कूल जाना अच्छा भी लगने लगता था। मास्टर प्रीतमसिंह जब परेड करवाते और मुँह में सीटी ले कर लेफ्ट-राइट की आवाज़ निकालते हुए मार्च करवाया करते थे। फिर जब वे राइट टर्न या लेफ्ट टार्न या अबाऊट टर्न कहते तो सभी विद्यार्थी अपने छोटे-छोटे जूतों की एड़ियों पर दाएँ-बाएँ या एकदम पीछे मुड़कर जूतों की ठक-ठक करते और ऐसे घमंड के साथ चलते जैसे वे सभी विद्यार्थी न हो कर, बहुत महत्वपूर्ण 'आदमी' हों, जैसे किसी देश का फौज़ी जवान होता है ।

दूसरे विश्व युद्ध का समय था, परन्तु हमारी नाभा रियासत का राजा अंग्रेजों ने 1923 में गिरफ़्तार कर लिया था और तमिलनाडु में कोडाएकेनाल में ही, जंग शुरू होने से पहले उसका देहांत हो गया था। उस राजा का बेटा, कहते थे अभी विलायत में पढ़ रहा था। इसलिए हमारे देसी रियासत में भी अंग्रेज की ही चलती थी फिर भी राजा के न रहते, अंग्रेज हमारी रियासत के गाँवों से 'जबरन' भरती नहीं कर पाया था। लोगो को फ़ौज में भर्ती करने के लिए जब कुछ अफसर आते तो उनके साथ कुछ नौटंकी वाले भी हुआ करते। वे रात को खुले मैदान में शामियाने लगाकर लोगों को फ़ौज के सुख-आराम, बहादुरी के दृश्य दिखाकर आकर्षित किया करते। उनका एक गाना अभी भी याद है। कुछ मसखरे अज़ीब सी वर्दियाँ पहने और अच्छे, बड़े फ़ौजी बूट पहने गाया करते- **भरती हो जा रे रंगरूट भरती हो जा रे...अठे मिले सैं टूटे लीतर,उठै मिलैंदे बूट,भरती हो जा रे,हो जा रे रंगरूट।अठे पहन सै फटे पुराणे..उठै मिलेंगे सूट,भरती हो जा रे,हो जा रे रंगरूट।**इन्हीं सारी बातों की वजह से कुछ नौजवान फ़ौज में भरती होने के लिए तैयार भी हो जाया करते थे।

लेखक कहते है कि उन्होंने कभी भी मास्टर प्रीतमचंद को स्कूल के समय में मुस्कुराते या हँसते नहीं देखा था। उनका छोटा कद, दुबला-पतला परन्तु पुष्ट शरीर, माता के दानों से भरा चेहरा यानि चेचक के दागों से भरा चेहरा और बाज़ सी तेज़ आँखें, खाकी वर्दी, चमड़े के चौड़े पंजों वाले जूत-ये सभी चीज़े बच्चों को भयभीत करने वाली होती थी। लेखक अपनी पूरी ज़िन्दगी में उस दिन को कभी नहीं भूल पाया जिस दिन मास्टर प्रीतमचंद लेखक की चौथी कक्षा को फ़ारसी पढ़ाने लगे थे। अभी उन्हें पढ़ते हुए एक सप्ताह भी नहीं हुआ होगा कि प्रीतमचंद ने उन्हें एक शब्दरूप याद करने को कहा और आज्ञा दी कि कल इसी घंटी में केवल जुबान के द्वारा ही सुनेंगे। दूसरे दिन मास्टर प्रीतमचंद ने बारी-बारी सबको सुनाने के लिए कहा तो एक भी लड़का न सुना पाया। मास्टर जी ने गुस्से में चिल्लाकर सभी विद्यार्थी को कान पकड़कर पीठ ऊँची रखने को कहा। जब लेखक की कक्षा को सज़ा दी जा रही थी तो उसके कुछ समय पहले शर्मा जी स्कूल में नहीं थे।

आते ही जो कुछ उन्होंने देखा वह सहन नहीं कर पाए। शायद यह पहला अवसर था कि उन्होंने पीटी प्रीतमचंद की उस असभ्यता एवं जंगलीपन को सहन नहीं किया और वह भड़क गए थे। लेखक कहते है कि जिस दिन से हेडमास्टर शर्मा जी ने पीटी प्रीतमचंद को निलंबित किया था उस दिन के बाद यह पता होते हुए भी कि पीटी प्रीतमचंद को जब तक नाभा से डायरेक्टर 'बहाल' नहीं करेंगें तब तक वह स्कूल में कदम नहीं रख सकते, फिर भी जब भी फ़ारसी की घंटी बजती तो लेखक की और उसकी कक्षा के सभी बच्चों की छाती धक्-धक् करने लगती और लगता जैसे छाती फटने वाली हो।लेखक कहता है कि कई सप्ताह तक पीटी मास्टर स्कूल नहीं आए। लेखक और उसके साथियों को पता चला कि बाज़ार में एक दूकान के ऊपर उन्होंने जो छोटी-छोटी खिड़कियों वाला चौबारा (वह कमरा जिसमें चारों और से खिड़कियाँ और दरवाजें हों) किराए पर ले रखा था, पीटी मास्टर वहीं आराम से रह रहे थे। कुछ सातवीं-आठवीं के विद्यार्थी लेखक और उसके साथियों को बताया करते थे कि उन्हें निष्कासित होने की थोड़ी सी भी चिंता नहीं थी।

जिस तरह वह पहले आराम से पिंजरे में रखे दो तोतों को दिन में कई बार, भिगोकर रखे बादामों की गिरियों का छिलका उतारकर खिलाते थे, वे आज भी उसी तरह से रह रहे हैं। लेखक और उसके साथियों के लिए यह चमत्कार ही था कि जो प्रीतमचंद पट्टी या डंडे से मार-मारकर विद्यार्थियों की चमड़ी तक उधेड़ देते, वह अपने तोतों से मीठी-मीठी बातें कैसे कर लेते थे। लेखक स्वयं में सोच रहा था कि क्या तोतों को उनकी आग की तरह जलती, भूरी आँखों से डर नहीं लगता होगा। लेखक और उसके साथियों की समझ में ऐसी बातें तब नहीं आ पाती थीं, क्योंकि तब वे बहुत छोटे हुआ करते थे। वे तो बस पीटी मास्टर के इस रूप को एक तरह से अद्भुत ही मानते थे।

paper boat
drinks and memories
All the mixed feelings of the last exam!

सपनों के से दिन

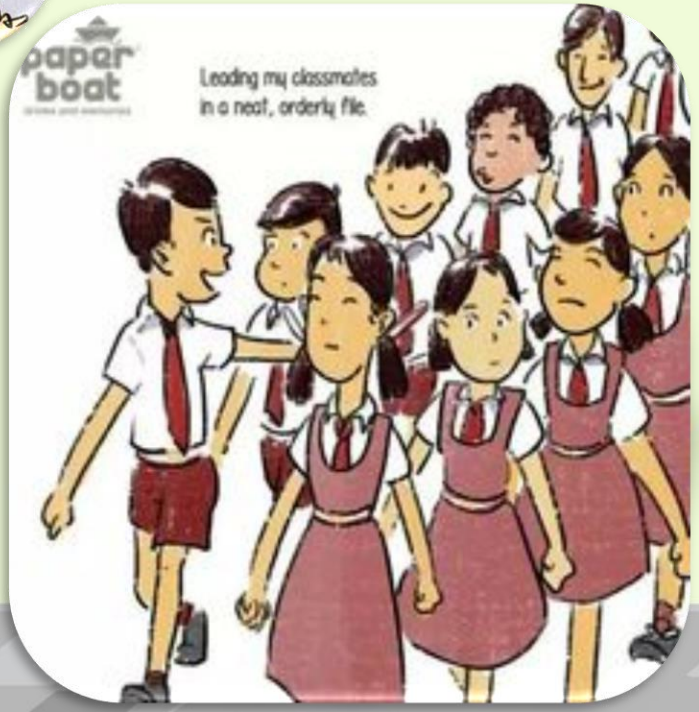
paper boat
Leading my classmates in a neat, orderly file.